मृत्यु से मुक्ति तक

श्रीमद्भागवत सरलतम तत्व-विवेचन

डॉ रमेश सिंह पाल

notionpress.com
INDIA • SINGAPORE • MALAYSIA

विषय-सूची

प्रस्तावना **7-10**

अध्याय-1, श्रीमद्भागवतमाहात्म्य **11-26**

परमात्मा, इच्छा पूर्ति का साधन नहीं है।

अध्याय-2, प्रथमस्कन्ध **27-44**

योग्य तो बनना पड़ेगा।

अध्याय-3, द्वितीयस्कन्ध **45-60**

आखिर कैसे जाने उसको?।

अध्याय-4, तृतीयस्कन्ध **61-82**

ईश्वर सृष्टि में दुःख नहीं है, मनुष्य सृष्टि में सुख नहीं है।

अध्याय-5, चतुर्थस्कन्ध **83-106**

मुक्ति के लिए सम्यक पुरुषार्थ अति-आवश्यक है।

अध्याय-6, पञ्चमस्कन्ध **107-120**

ये सम्पूर्ण विश्व, विश्व-विद्यालय है।

अध्याय-7, षष्ठस्कन्ध **121-130**

वासनाये ही, एक मात्र बंधन है।

अध्याय-8, सप्तमस्कन्ध 131-146

करने का रोग, सबसे बड़ा रोग है।

अध्याय-9, अष्टमस्कन्ध 147-164

समझदारी से जीवन जीना, ही साधना है।

अध्याय-10, नवमस्कन्ध 165-176

भक्त और भगवान अलग-अलग नहीं है।

अध्याय-11, दशमस्कन्ध 177-244

ये संसार भगवान की लीला मात्र है।

अध्याय-12, एकादशस्कन्ध 245-310

मृत्यु, अविद्या के कारण उपजी एक भ्रान्ति मात्र है।

अध्याय-12, द्वादशस्कन्ध 311-316

अपने वास्तविक स्वरुप में लौट जाना, मुक्ति है।

प्रस्तावना

एक बार किसी ने मुझसे पूछा कि हम जीवन जी क्यों रहे है? तो मेरे मुख से स्वतः ही निकल गया कि हम सब लोग मरने के लिए ही जी रहे है। उस समय तो मैंने बोल दिया लेकिन बाद मे मेरे मन में इस वाक्य को लेकर बहुत विचार आने लगे क्यो कि देखा जाय तो यह सत्य है कि हम सब मरने के लिए ही, जीवित है। मरण (मृत्यु) ही एक मात्र सत्य है, लेकिन हमने वेदान्त मे पढ़ा है कि मृत्यु तो असम्भव है, मृत्यु केवल एक अवस्था परिवर्तन मात्र है। जिस प्रकार जब हम पैदा होते है तो हमारा देह एक शिशु का देह होता है, फिर यह देह बढ़ता है और जवान (प्रौढ़) अवस्था मे आता है, फिर यह देह मे विकार आते है, तथा इसका क्षय शुरू होता है और फिर बुढ़ापा आता है और एक दिन यह देह की मृत्यु हो जाती है।

अगर थोड़ा ध्यान से देखा जाए तो यह उसी प्रकार है जैसे, समुद्र मे पानी भाप बनकर उड़ा फिर वो बादल बना और फिर बादल नष्ट होकर फिर से पानी मे मिल गये तो क्या पानी का जन्म हुआ और क्या पानी की मृत्यु हो गयी? मनुष्य अपने संस्कारो के अनुरूप एक देह धारण करता है और उस देह के साथ वह इतना अधिक (प्रगाढ़) तादात्म कर लेता है कि वह देह को ही सत्य मान कर जीने लगता है, और जैसे-जैसे इस देह में विकार आने शुरू होते है, मनुष्य को गहरी चिन्ता घेर लेती है। देखा जाय तो कोई भी मनुष्य मृत्यु के कारण दुखी नही होता क्यों कि शायद सभी को पता है कि एक दिन तो मरना ही है, मनुष्य मृत्यु के भय के कारण दुखी होता है, मृत्यु का भय आदमी को जीने नही देता।

जब हम इस संसार मे आते है हमे हर एक चीज सीखनी पड़ती है चाहे वह गाड़ी चलाना हो या जीवन निर्वाह के लिए कोई भी कार्य हो, तो क्या हमे यह नहीं सीखना चाहिए कि मरना कैसे है? यदि जीवन जीना एक कला है तो मरना भी एक कला है। भगवान ने भगवतगीता मे कहा है, “अमृतं चौव मृत्युश्च सदसच्चाहमर्जुन” कि जीवन भी मै ही हूँ और मृत्यु भी मै ही हूँ। सत भी मै ही हूँ और असत भी मैं ही हूँ। अगर मृत्यु भी परमात्मा ही है तो भला मृत्यु से कैसा भय? परंतु यह

बात बोलने मे तो ठीक लगती है लेकिन जब तक हम जीवन को सही ढंग के नही समझते, तब तक मृत्यु को भी हम नही समझ सकते।

भगवत गीता में भगवान कहते है कि आदमी का दो तरह से देह त्याग हो सकता है, एक तो है कीट पतंगे की तरह का कीट पटगे, कामना के वसीभूत होकर गति प्रकाश/अग्नि की ओर आकर्षित होते है। और उनमे जलकर तड़प-तड़प कर अपने प्राण त्यागते है। ये बड़ी दर्द-दायक मृत्यु है, लेकिन क्योंकि कामना मे चाहे, कीट-पतंगे हो या मनुष्य हर कोई अन्धा हो जाता है। उसे पता होता है कि वह किस नरक से गुजर रहा है। लेकिन फिर भी अपनी कामनाओं को नही त्यागता। दूसरी तरह की मृत्यु हमें दिखाई नहीं पड़ती है। नदी भी सागर में मिलकर स्वयं को खो देती है लेकिन वो मिटती नही, अब वो सागर हो जाती है। अब वो अनंत हो जाती है, जो ज्ञानीजन, विवेकी पुरुष है, वो जानते है कि मृत्यु, मुक्ति के रास्ते मे आने वाला एक पड़ाव मात्र है, मृत्यु तो अनंत होने का अवसर है। अपने व्यतित्व को मिटाकर अनंत के साथ एक हो जाना, ऐसी मृत्यु, मुक्ति है।

यह पुस्तक श्रीमद भागवत महापुराण को आधार बनाकर लिखी गयी हैं, श्रीमद भागवत महापुराण इतना विस्तृत है कि एक आम आदमी इसे पूरा अध्यन करने से पहले १०० बार सोचता है इसलिए वह कथावाचकों से भागवतम सुन लेता है, इसमें बताई गयी कथाओ को भी याद कर लेता है। लेकिन उन कथाओ का तात्यर्य निर्णय, व्यवहारिक एवं आध्यात्मिक तौर पर सही-सही नहीं कर पता है। आजकल के कथा वाचक भी केवल धर्म और कथा को, धन और यश बटोरने साधन बनाये हुए है। इसलिए शायद आज एक आम आदमी, धर्म और अध्यात्म को लेकर जितना संदेहित है, इतना कभी भी नहीं था।

श्रीमद भगवत महापुराण में सबकुछ है, उपनिषद जैसा ज्ञान है, भक्ति-सूत्र जैसी भक्ति है और भगवत गीता जैसा कर्म-सन्यास भी है। नीति, धर्म और अध्यात्म का पूर्ण समवेश हमें श्रीमद भगवत महापुराण में देखने को मिलता है। इस पुस्तक में तत्व (वेदान्त) की दृष्टि से भागवत महापुराण के तथ्यो का विवेचन किया गया है, जब तक हम लोग अपनी दृष्टि में द्वैवत को छोड़कर अद्वैवत भाव नही ले आते, यह पुस्तक पूर्ण रूप से समझ मे नही आ सकती तथा इसमें बताये गये तथ्य हमे केवल मानसिक कल्पानाओ मे ही डालेंगे।

ये पुस्तक एक प्रयास है, पूर्ण भागवतम के सार को व्यावहारिक दृष्टि से जनमानस के लिए उपलब्ध कराने का। लेखक के लिए १८००० श्लोक को लगभग ३०० पेजो में समाहित करना एक चुनौती भरा कार्य था। लेकिन परमात्मा की कृपा दृष्टि और गुरुओ के आशीर्वाद से, ये कार्य लेखक द्वारा सफलता पूर्वक इस किताब के रूप में सम्प्पन किया गया। ये पुस्तक केवल चंद पन्नो पर लिखी कुछ लाइने

नहीं है, बल्कि ये पुस्तक एक-पथ प्रदर्शक साबित हो सकती है, उन सभी जिज्ञासुओ के लिए जो समझते है कि मनुष्य जीवन का प्रथम और अंतिम लक्ष्य, जीवन में कृत-कृत्यता, आत्म-ज्ञान और आंनद प्राप्ति है।

डॉ रमेश सिंह पाल

अध्याय-1

श्रीमद्भागवत माहात्म्य

परमात्मा, इच्छा पूर्ति का साधन नहीं है

श्रीमदभागवत महापुराण का प्रथम स्कन्ध, माहात्म्य स्कन्ध है। माहात्म्य का क्या अर्थ है? यह समझना बहुत जरूरी है। सामान्यतः इस संसार में कोई भी मनुष्य किसी भी प्रकार का कर्म निष्प्रयोजन नही करता है। प्रत्येक कर्म मे एक प्रयोजन छुपा होता है, और जब तक वो कार्य हमारे लिए किस प्रकार से अच्छा है या फलदायी है, यह हम नही जान लेते; हम वो कार्य नही करते। अगर दूसरे शब्दो मे कहे तो जब तक किसी भी वस्तु के प्रति हमारी माहात्म्य बुद्धि नही होती, यह बुद्धि उस कार्य मे नहीं लगती। इसीलिए चाहे कोई भी ग्रन्थ ले लो या कोई भी स्त्रोत या मंत्र ले लो, उसमे फलश्रुत्री दी होती है कि इसको इतना पाठ करेंगे तो आपको अमुक चीजो की प्राप्ति होगी।

इसलिए जब भागवत कथा होती है तो भीड़ इकट्ठा करने के लिए पहले दिन व्यास पीठ पर बैठे कथावाचक भागवत के माहात्म का विस्तार से वर्णन करते है, और जो लोग कथा सुनने आते है उनको लगता है कि चलो सुन लेते है, क्या पता हमारे दुखः दुर हो जायः? अगर, हमारी नीव ही गलत हो तो मकान कैसे ठीक रह सकता है। जब तक कथा सुनते है तो सब ठीक लगता है, परन्तु जैसे ही घर गये फिर वही लड़ाई, झगड़ा, क्लेष और दुख शुरू हो जाता है।

एक बात बहुत ही स्पष्ट तौर पर समझ लेनी चाहिए कि जब तक हम परमात्मा को केवल ईट पत्थरो में देखते रहेगे, परमात्मा कभी भी हमारी बुद्धि मे नही समा सकता, परमात्मा को जब तक हम केवल अपनी इच्छा पूर्ति का साधन मानेंगे, दुख हमारा पीछा नही छोड़ेगे। जब तक जीवन को हम समझदारी से जीना प्रारम्भ नही करते, हमारे जीवन मे कष्ट दुख निरन्तर बने रहेंगे, और समझदारी से जीवन जीने के लिए हमे अपनी गलत धारणाओं को ठीक करना पड़ेगा। हमारी

गलत धारणाये है कि हम कौन है? ईश्वर कौन है?, जीव का क्या अर्थ है?, जगत का स्वरूप क्या है? तथा आध्यातमिक साधना क्या है?

जब तक हम इन तत्थो को स्पष्ट तौर पर नही जान जाते है, हम परमात्मा का नाम लेने से पहले सोचेंगे कि यार! नाम लेने के क्या मिलेगा?

भागवत महापुराण हमे, हमारे गलत धारणाओं को ठीक करके, कैसे परमात्मा के साथ एक होना है? यह सिखाती है। इसके पाठ से मिलेगा कुछ भी नही? बल्कि जो भी आपने अभी तक पकड़ कर रखा है, वो भी छूट जायेगा। हमने क्या पकड़ कर रखा है? सबके पहले तो हमने इस देह को पकड़ कर रखा है, इस देह के साथ इतना आसक्त हो जातें है मानो सब कुछ यह देह ही है। फिर हमने पकड़कर रखा है, नाम-रूप, उपाधि, राग-द्वेष, ईर्ष्या, मंद, मात्सर्य, आदि ये सभी हमको इस देह में बाधते है। भागवत का महात्म यहि है कि इन देह विकारों को समाप्त करके, कैसे हम अपने स्वरूप में लौट आये।

देह के साथ हमे जीवन कैसे जीना चाहिये? यह हमे भगवान भगवत गीता मे बताते है तथा हमे देह का त्याग कैसे करना चाहिए यह हमे भागवत महापुराण बताता है, और एक बात अवश्य जान ले जो मनुष्य ठीक प्रकार से जीवन जीया नही वह ठीक प्रकार से मर भी नही सकता। यही जीवन का नियम है। जीवन इसी प्रकार कार्य करता है।

1. मंगलाचरण

मंगलाचरण का तात्पर्य है कि हम सभी के साथ अच्छा व्यवहार करे। इसके लिए जरूरी है, हम प्रत्येक मनुष्य मे भगवान को देखे क्यों कि सभी में वही परमात्मा जीवन के रूप मे प्रकट हो रहा है।

सच्चिदानन्द रूपाय विश्वोत्पत्यादिहेतवे।
तापत्रय विनाशाय श्रीकृष्णायवयंनुमः।।

सत-चित-आनन्द ये तीन शब्द परमात्मा, ब्रहम या भगवान को लखाने के लिए कहे जाते है। परमात्मा सत स्वरूप है, चित (चेतना) उसकी अनन्त शक्ति है तथा आनन्द उस अन्नत शक्ति की अभिव्यक्ति है। परमात्मा ही इस विश्व (जगत) के अभिन्न, निमित्त उपादान कारण है तथा वे तीनो तापो (आदि भौतिक, आदि दैविक तथा आध्यात्मिक) का नाश करने वाले है।

भौतिक जगत मे यदि हम देखे तो सृष्टि की संरचना, इस प्रकार बनायी गयी है मानो किसी ने बहुत ही सुनियोजित ढंग से सभी चीजों को अपनी जगह पर रखा हो, जब हम लोग एक घर बनाते है तो उसमे सभी चीजों का ध्यान रखते है, जिससे घर मे सभी लोग आराम के रह सके। उसी प्रकार सृष्टि मे

भी हमेशा एक सन्तुलन बना रहता है जैसे हवा, हमेशा बह रही है, सूर्य, चांद अपनी जगह पर है, पानी हमेशा तरल ही है।

अगर हम सृष्टि के विस्तार को देखे तो हमारी बुद्धि चक्कर खा जायेगी। यह ब्रह्मांड अनन्त है और सब अपनी जगह पर सही प्रकार कार्य कर रहा है। यह सब कुछ क्या अपने आप हो रहा है? हम अपने घर पर यदि किसी छोटे से भी उत्सव का आयोजन करते है तो हम घर के सभी लोग कितने दिनो तक इसमे लगे रहते है, तो फिर ये अनन्त ब्रह्मंण कैसे भला बिना किसी नियंत्रण के नियंत्रित हो सकता है। उसी अनन्त शक्ति, चैतन्य तथा ज्ञान के स्त्रोत को भक्त लोग भगवान, योगी लोग परमात्मा तथा वेदान्त में ब्रह्म कहा जाता है। भागवत में उसी ब्रह्म को कृष्ण कहा गया है।

अगर कोई पेन्टर, एक अच्छी पेन्टिंग बनाता है तो सभी उसकी बहुत तारीफ करते है। लेकिन जिसने यह जीती जागती विश्व रूप पेन्टिंग बनायी है उस तरफ हमारा ध्यान ही नही जाता है। सभी लोगो ने चींटी अवश्य देखी होगी, एक छोटी सी चीटी क्या कमाल की संरचना है। क्या कोई मनुष्य चीटी बना सकता है? एक पेड़ का पत्ता कैसे कार्य करता है। पूरी जीवन भर भी यदि इस पर हम सोचते रहे तो कई जन्मों के बाद भी हम इस पत्ते के बारे में पूर्ण रूप में नही जान सकते।

चाहे वह एक मनुष्य हो, कोई जानवर हो, पेड़-पौधा हो या ईट-पत्थर सभी केवल इसीलिए है क्यो कि उनमें परमात्मा की अभिव्यक्ति है अन्यथा यदि परमात्मा की अभिव्यक्ति ना हो तो कुछ भी ना हो। यहि है मंगलाचरण का तात्पर्य कि हम यह जान ले कि यह जीव, जगत, ईश्वर, सत, असत, सब कुछ परमात्मा ही है और कुछ नही।

2. भागवत माहात्म्य

भगवान श्री कृष्ण के पश्चात् हम भगवान शुकदेव जी को नमस्कार करते है। श्रीमद भागवत महापुराण के अनेक वक्ता हुए है परन्तु शुकदेव जी के समान कोई वक्ता नही हुआ। श्रीमदभागवत की गुरू परंपरा में नाराण भगवान आदि गुरू है। उनके शिष्य है ब्रह्मा जी, ब्रह्मा जी के शिष्य है नारद मुनि, नारद मुनि के शिष्य है, भगवान वेदव्यास जी और वेदव्यास जी के शिष्य है शुकदेव जी। शुकदेव जी का ऐसा विलक्षण प्रभाव है कि उनके आगमन पर बड़े-बड़े महर्षियों की सभा में भी सब के सब उठकर खड़े हो जाते है। स्वयं भगवान वेदव्यास भी खड़े हो जाते है। यद्यपि शुकदेव जी की आयु केवल सोलह वर्ष की है। शुकदेव जी के बारे में बहुत सारी कथायें शास्त्रो में मिलती है। जिनमें से स्कन्ध पुराण में वर्णन आता है कि-जब भगवान शुकदेव जी माता के गर्भ में थे तो गर्भ से निकलना ही नही चाहते थे। दस महीने हो गये, एक साल हो गया, बारह साल हो गये तो भी वे गर्भ से बाहर नही आये। परेशान होकर

माता ने शुकदेव जी के पिता भगवान वेदव्यास से कहा तब भगवान वेदव्यास जी कहते है कि हे पुत्र माता को बहुत कष्ट हो रहा है। तुम बाहर आ जाओ, तो शुकदेव जी कहते है कि हे पिता जी, भगवान की माया बहुत प्रबल है बाहर आते ही वह सबको फसा लेती है। अतः मै बाहर नही निकलूंगा। तो वेदव्यास जी ने कहा ''अच्छा मै तुमको आशीर्वाद देता हूं कि बाहर आने पर भी माया तुम्हे नही सतायेगी'' इतना कहते ही शुकदेव जी गर्भ से बाहर आकर सीधे जंगल की ओर जाने लगे ऐसा देखकर भगवान वेदव्यास भी उनके पीछे पुत्र-पुत्र की आवाज लगाते हुए जाने लगे तब शुकदेव जी की ओर से पेड़ो ने व्यास जी को उत्तर दिया कि हे भगवन वो वापिस नही आयेंगे आपका प्रयास बेकार है। क्योकि वे तो ''सर्वभूतात्मभूतात्मा'' है तथा माया उन पर प्रभाव नही डाल सकती।

इस कथा में यह भी आता है कि भगवान शुकदेव जी का ना तो यज्ञोपवित हुआ और ना ही कोई और संस्कार हुआ क्योकि जो नित्य शुद्ध है उन्हें सन्सकारों की क्या आवश्यकता है। संस्कार तो अशुद्ध लोगो को दिये जाते है। प्रश्नोपनिषद में भगवान के लिए ''व्रात्य'' शब्द का प्रयोग किया गया है। जिसका अर्थ होता है ''संस्कारहीन''।

भागवत महात्म्य की कथा का प्रसंग पद्‌यपुराण से लिया गया है। यह श्रीमदभागवत का प्रथम स्कन्ध है तथा इसमें छः अध्याय है।

एक बार नैमिषारण्य में शौनकदि अठासी हजार ऋषि जब यज्ञ कर रहे थे तो वहां पर श्री सूत जी आते है। ये ''सूत जी'' कौन है? भगवान वेदव्यास के शिष्य रोमहर्षण के पुत्र है। सूत एक जाति होती है जिसमें माँ ब्राह्मण जाति की होती है और पिता क्षत्रिय जाति के होते है। ऐसे विवाह को प्रतिलोम विवाह कहते है, उनका जो पुत्र होता है उसे सूत कहते है श्री सूत जी बड़े ही ज्ञानी थे ऋषियो की सभा में जाकर वे पुराणो की कथा सुनाते थे।

यहां पर ''नैमिषारण्य'' स्थान का विवेचन करना जरूरी है। इसको दो तथ्यों से समझते है। एक बार बहुत सारे ऋषि भगवान ब्रह्मा जी के पास गये और पूछने लगे कि हम साधना कहा पर करे? तब ब्रह्मा जी ने उन्हे चार भुजाओ वाला (मन, चित्त, बुद्धि, अहंकार) वाला एक घुमता हुआ चक्र दिया और कहा कि जिस भी स्थान पर यह चक्र घुमना बन्द हो जायेगा वही साधना का उत्तम स्थान होगा। वह चक्र आकर उत्तर प्रदेश, लखनऊ के नजदीक नैमिषारण्य स्थान पर रूक गया। इस कथा का तात्पर्य यही है कि जहां कही पर भी हमारे मन का भटकना बन्द हो जाता है, मन के विक्षेप शान्त हो आए और उनमें स्थिरता आ आए वही स्थान शाधना के लिए उत्तम है। दूसरी रिति से देखे तो निमिष का अर्थ होता है, एक क्षण मात्र में हमारा ध्यान अथवा मन भगवान में रम जाये हमारे मन की आसुरी वृत्तियां शान्त हो जाये उसी स्थान को नैमिषारण्य कहा जाता है।

सूत जी को आता देखकर अठासी हजार ऋषियों के प्रमुख श्री शौनक जी सूत जी को नमस्कार करते है और उन्हे आसन पर बिठाकर निवेदन करते है- हे सूत जी आप हमे कानो मे अमृत घोलने वाली भगवान की कथा सुनाइये, अब ''कथा'' शब्द का अर्थ भी समझ लेना चाहिए, कथ का अर्थ कोई काल्पनिक कहानी किस्सा नही होता है, कथा का अर्थ है ''कथ'' यानी कहना, हम कहते किसलिए है? किसी वस्तु को प्रकाशित करने के लिए, उसका बोध कराने के लिए। ''कथ्यते, प्रकाश्यते यथां कथा'' जिसके द्वारा कोई चीज कही जाती है, प्रकाशित की जाती है उसे कथा कहते है।

शौनक जी कहते है कि हे भगवन आप ऐसी कथा सुनाये जिससे सुनकर भक्ति, ज्ञान, वैराग्य बढ़ने लगते है और मोह-माया, आसक्ति, राग-द्वेष, क्रोध आदि घटने लगते है। शौनक जी का प्रश्न सर्वकल्याणकारी होने के कारण उत्तम प्रश्न माना जाता है क्योकि यह प्रश्न व्यक्तिगत नही था। हमारे प्रश्न प्रायः व्यक्तिगत होते है। जैसे मेरी शादी कब होगी? धन की प्राप्ति कब होगा, नौकरी कब लगेगी इत्यादि। इस तरह के व्यक्तिगत प्रश्नों के उत्तर श्रेष्ठ महाजन नही देते, परन्तु जिन प्रश्नो में जिज्ञासा छुपी हो तथा जो सर्वकल्याणकारी हो ऐसा प्रश्न सुनकर महात्मजन अत्यन्त प्रसन्न हो जाते है।

सूत जी कहते है कि हे शौनक जी, आपका प्रश्न बहुत ही उत्तम है। इसलिए मै सर्व सिद्धान्तो का सार तुम्हे सुनाता हूँ। संसार के भय, मृत्यु के भय तथा मन के विक्षेपो के कारण होने वाले दुखों को पूर्णतः नष्ट करने वाले अमृत का नाम है श्रीमद्भागवत। आगे सूत जी कहते है कि जब शुकदेव जी परीक्षीत महाराज को भागवत सुनाने लगे, तब देवता लोग अमृत कुंभ लेकर वहां पर पहुच गये और शुकदेव जी से कहने लगे- महाराज इन्हे (राजा को) श्राप मिला है कि तक्षक आयेगा और उनके दंश से इनका मरण होगा, तो इन्हे हम यह अमृत कुंभ दिये देते है परन्तु आप यह भागवतामृत हमे भी दीजिये तब शुकदेव महाराज कहते है। कहां तुम्हारा अमृत और कहां यह भागवत कथा। तुम्हारे अमृत को पीकर केवल देह की मृत्यु से बचा जा सकता है। परन्तु पाप, पुण्य, सुख, दुख, काम, द्वेष से मुक्ति नही मिल सकती है। देहात्मभाव फिर भी बना रहता है। ऐसा जी कर भला क्या लाभ? परन्तु भागवत अमृत के द्वारा जन्म-मृत्यु के परे जाया जा सकता है जो कि जीव का एक मात्र लक्ष्य है। ऐसा जानकर शुकदेव जी ने भागवत कथा देवताओं को नही दी। तुलसीदास जी तो साफ-साफ कहते है।

''आए देव सदा स्वारथी''

इस प्रसंग से यह बात बतायी गयी है कि देवताओं के लिए भी यह कथा दुर्लभ है। तो फिर भागवत का श्रेष्ठ अधिकारी कौन है? भागवत का उत्तम अधिकारी वह है जिसे अब जीवन में कुछ और सिद्ध नही करना है। जिसका मन संसार से

उपरत हो गया है तथा जो अपने भगवत स्वरूप को जानने का जिग्यासु है। वही केवल भागवत में बतायी गयी बातो का सही ढंग से तात्पर्य निर्णय कर सकता है तथा तात्पर्य निर्णय करके इस पर चिन्तन, मनन व निधिध्यासन कर सकता है।

राजा परीक्षित को श्राप मिला था कि सातवे दिन तक्षक नाग उन्हे काट लेगा और उनका मरण हो जायेगा। यह जानकर राजा ने सब कुछ त्याग दिया और गंगा किनारे जाकर बैठ गये। इसका अभिप्राय क्या हुआ? उन सात दिनो में भागवत के द्वारा राजा परीक्षित को अपने असली स्वरूप का ज्ञान हो गया और वे तक्षक के आने से पहले ही अपने मूल स्वरूप (परमात्मा) के साथ मिल गये। भगवत गीता में भगवान 11वे अध्याय में दो तरह की मृत्यु का वर्णन करते है।

यथा नदीनां बहवोऽम्बुवेगाः समुद्रमेवाभिमुखा द्रवन्ति।
तथा तवामी नरलोकवीरा विशन्ति वक्त्राण्यभिविज्वलन्ति॥

पहली मृत्यु उन लोगो के लिए बतायी है जिन्होने कर्म के द्वारा अपना अर्न्तकर्ण शुद्ध करके उपासना के द्वारा अपना मन परमात्मा की ओर लगाकर, समझदारी पूर्वक जीवन जीया है। वे मनुष्य अन्त समय में परमात्मा के साथ ठीक वैसे ही मिल जाते है जैसे कोई नदी लाखो मील का सफर तय करके अन्त में बिना किसी आवाज के, शान्त सागर में मिल जाती है। इस मिलन में पानी, पानी से ही मिल जाता है क्याकि पानी चाहे नदी का हो या सागर का सत्य नदी या सागर नही है, सत्य पानी है। ठीक उसी प्रकार हम अपने स्वभाव को मिटाकर, जब अपने स्वरूप में मिल जाते है तो इसे मृत्यु नही कहते इसे मोक्ष या मुक्ति कहते है, जो कि देवताओं के लिए भी दुर्लभ है।

दूसरी ओर वे मनुष्य है जिनका अर्न्तकर्ण शुद्ध नही है, जिनके जीवन का प्रेरक काम है। उनके लिए भगवान कहते है।

यथा प्रदीप्तं ज्वलनं पतंगाविशन्ति नाशाय समृद्धवेगाः।
तथैव नाशाय विशन्ति लोकास्तवापि वक्त्राणि समृद्धवेगाः॥

जो मनुष्य पूरा जीवन के मन की इच्छाओ को पूरा करने में बीता देते है तथा इस देह को ही सम्पूर्ण सत्य समझकर जीते है, वो अपने जीवन का त्याग भी उस प्रकार करते है जैसे कीट-पतंगे वर्षा ऋतु में काम से प्रेरित होकर प्रकाश की ओर भागते है और उससे टकरा-टकरा कर अपने प्राण त्याग देते है। यह मृत्यु बड़ी ही दुखदायी होती है। रहीमदास जी कहते है।

तन रहीम है कर्म बस, मन राखो ओही ओर।
जल में उलझी नाव जा, खैचत उनके जोर॥

इससे बचने के लिए ही एक आध्यात्मिक जीवन निर्वाह के लिए, जो भी कर्म करे; परन्तु मन हमेशा अपने उदगम स्थान (शुद्ध चैतन्य परमात्मा) की ओर होना चाहिए।

सातवे दिन ऋषि श्राप के अनुसार तक्षक आया और परीक्षित जी को काटा लेकिन परिक्षित महाराज के देह को। परीक्षित महाराज तो उससे पहले ही देहात्मभाव का त्याग करके परम आनन्द परमात्मा से जा मिले थे। अगर कोई ये कहे कि तक्षक के काटने से परीक्षित महाराज की मृत्यु हुई तो यह गलत होगा क्योकि मृत्यु केवल उसकी होती है जिसका जन्म होता है और हमारा न तो जन्म हुआ है और न मृत्यु। हम एक अखण्ड सत्ता है, लेकिन मन तथा माया के कारण ऐसा प्रतित होता सा दिखता है जैसे हमने जन्म लिया और हमारी मृत्यु हो जायेगी। इसी अज्ञान को नष्ट करने के लिए भागवत तत्व विवेचन सार समझना अति आवश्यक है।

आगे सूत जी कहते है कि हे शौनक जी, भागवत सर्वप्रथम नारद जी को सनत्कुमारो ने बताई थी। पुराणो की कथाँए ऐसी है कि एक कथा में से दूसरी कथा निकल आती है। शौनक जी ने सूत जी से पूछा कि हे भगवन, नारद जी तो हमेशा घूमते रहते है, उनका सनत्कुमारो से कहा मिलना हुआ? और उन्होने भागवत कहा सुनायी? सूत जी कहते है कि नारद का अर्थ होता है ''ज्ञान देने वाला'' एक बार नारद जी विचरण करते-करते बद्रिकाश्रम में पहुचे, जहां उनकी भेट सनत्कुमारो से हुई, सनक, सनातन, सनन्दन और सनत्कुमार। ये चारो ब्रह्मा जी के मानस पुत्र है। उन्होने नारद जी से पूछा ''नारद जी आप बहुत दुखी दिखाई दे रहे हो, क्या बात है? इस पर नारद जी बोले कि हे भगवन, मै स्वर्गलोक से यह सोचकर पृथ्वी पर गया था कि पृथ्वी बहुत अच्छी जगह है क्योकि मनुष्य बड़े अधिकारी होते है, परन्तु पृथ्वी पर मैने देखा कि सब ओर दुख ही दुख है, पृथ्वी पर सत्य नही है, तप नही है, सौच, दया, दान आदि कुछ भी नही है। यह देखकर में हैरान और दुखी हुआ कि लोग वेद भी बेचने लगे है और भगवान का नाम लोग केवल डर के कारण ले रहे है। भगवान से कोई प्रेम नही करता।

3. नारद जी और भक्ति का संवाद

नारद जी कहते है कि मै चलते-चलते वृन्दावन पहुचा वहां मैने एक अदभुत बात देखी, मैने देखा कि एक सुन्दर तरूणी स्त्री अपने दो पुत्रो के पास बैठकर विलाप कर रही थी। उसके दोनों पुत्र वृद्ध हो गये थे तथा बेहोश पड़े थे। उस स्त्री के साथ उसकी सखियां भी थी जो उसकी सेवा कर रही थी। तब मैने उससे पूछा कि आप कौन है? वो बोली-कि मै भक्ति हूं और ये दानो मेरे पुत्र है, ज्ञान और वैराग्य और ये स्त्रिया गंगा, जमुना, कावेरी आदि नदियां है। वह बोली कि हे भगवन मै बहुत दुखी हूँ। मेरा जन्म द्रविड़ देश में हुआ, कर्नाटक मै मेरी वृद्धि हुई, महाराष्ट्र में

थोड़ी और बढ़ी और गुजरात में जाकर क्षीण हो गयी। फिर मै वृन्दावन आ गयी, वृन्दावन आकर मै तो युवा हो गयी परन्तु मेरे दोनो पुत्र ज्ञान और वैराग्य बूढ़े हो गये है। वृन्दावन, गोकुल के लोग भगवान श्री कृष्ण के सगुण उपासक है, उन्हे वेदान्त की चर्चा अच्छी नही लगती वे ज्ञान-वैराग्य को नही मानते इसलिए यहां ये दोनों बेहोश पड़े है। यहां के लोगो का कहना है कि हमें तो यहां सब जगह भगवान दिखते है तो वैराग्य किससे करे? भक्ति माता कहती है कि हे नारद जी आप मेरे पुत्रो के लिए कुछ कीजिए, उन्हे पुनः युवा बना दिजीये। नारद जी कहते है कि हे माता! चिन्ता मत करो, भगवान सब ठीक करें। यह सब कलियुग का प्रभाव है। अतः इसमें घबराने की कोई आवश्यकता नही है। मै अभी वेद-वेदान्त का पाठ करके इन्हे उठा देता हूं। नारद जी वेद-वेदान्त का पाठ करने लगे लेकिन ज्ञान वैराग्य नही उठे फिर नारद जी ने वेदान्त सार रूपि भगवतगीता का पाठ किया, तो भी ज्ञान वैराग्य थोड़ा जागकर फिर सो गये।

इसका तात्पर्य यह है कि चाहे हम वेदान्त पढ़ ले या चाहे भगवतगीता कन्ठस्थ याद कर ले, उससे हममे ज्ञान और वैराग्य का उदय नही हो सकता। जब तक कि हम वेदान्त तथा भगवतगीता में बताई गयी बातो पर चिन्तन, मनन तथा निधिध्यासन नही करते, वेदान्त तथा भगवतगीता के रहस्य इतने गूढ़ है कि उनका तात्पर्य निर्णय करना एक मनुष्य के लिए अत्यन्त कठिन है।

जब तक मनुष्य जीव, जगत, ईश्वर तथा परमात्मा को लेकर अपनी अनगिनत गलब धारणाओ को ठीक नही कर लेता उसमें ज्ञान, भक्ति तथा वैराग्य का उदय नही हो सकता है। यह उसी प्रकार है जैसे यदि हम एक पेड़ के पत्तो पर तथा तने पर खूब पानी खाद दे लेकिन यदि वह पानी और खाद उसकी जड़ तक नही पहुचेगा तो पेड़ सूख जायेगा, और यदि पेड़ के मूल जड़ को खाद पानी सही मिल रहा हो तो वह सदा हरा भरा रहेगा। इसलिए यदि मनुष्य अपने मूल स्वरूप से जुड़ा है तो वह कभी भी दुख की अवस्था में आ ही नही सकता।

4. नारद जी की सनत्कुमारो से भेट

जब ज्ञान और वैराग्य ठीक नही हुये तो नारद जी भी सोच में पड़ गये और वे बद्रीवन चले आये और वहा तपस्या का विचार कर ही हरे थे तभी चारो सनत्कुमार वहां आ गये। नारद जी उन्हे देखकर अत्यन्त प्रसन्न हो गये और उन्हे पृथ्वी लोक का पूरा वर्णन सुनाया तथा ज्ञान-वैराग्य को जगाने का उपाय पूछा। सनत्कुमारो ने कहा कि हे नारद जी आप चिन्ता ना करे।

सत्कर्मसूचको नून ज्ञानयज्ञः स्मृतो बुधै;।
श्रीमद्भागवत लापः सतु गीतः शुकादिभिः।।

आप भागवत सप्ताह करो, उसमे ज्ञान और वैराग्य जाग जायेगे। सनत्कुमार बोले इसकी दवाई पहले से ही ज्ञात है। कभी-कभी ऐसा हमारे साथ भी होता है जब हमे कोई रोग हो जाता है और उसकी दवाई हमे मालूम नही होती फिर हम डाक्टर के पास जाते है। वह हमे कही और भेज देता है परन्तु रोग ठीक नही होता फिर वो जानकार आकर कहता है कि तुम्हारे घर में तुलसी का पौधा है कि नही? बस उसका काढ़ा पी लो, कभी-कभी उपाय इतना सरल होते हुए भी हमे ज्ञात नही होता और हम दूसरे बड़े-बड़े उपाय करते रहते है। आपरेशन आदि कराने चले जाते है। यहि बात नारद जी के साथ भी हुई। यहां नारद जी पूछते है कि हे भगवन-यह बात मेरी समझ में नही आती, आखिर भागवत वेद-वेदान्त से अलग बात तो बताता नही है, फिर इसकी इतनी महिमा क्यो है? क्या भागवत में ऐसी कोई बात बतायी गयी है जो वेदो में न हो?

सनत्कुमारो ने कहा-बात तो तुम ठीक ही कहते हो। भागवत में वेदान्त ही बताया गया है, तथापि भागवत की विशेषता ऐसी है जैसे आम्र फल में आम के पेड़ का ही रस व्याप्त होता है, तथापि आम का स्वाद तो फल में ही आता है, पेड़ के दूसरे किसी भाग में नही आता है। -"निगम कल्पतरोर्गलितं फलम"। यह भागवत वेद-वेदान्त रूपी कल्पवृक्ष का पका हुआ फल है। पेड़ का ही सार फल में होता है लेकिन फल और पेड़ में बहुत अन्तर होता है। इसी प्रकार गन्ने का जो रस है वह गन्ने से अलग है, गन्ने में जो शक्कर है वह पूरे गन्ने में व्याप्त है लेकिन गन्ने का सारा भाग मीठा है क्या? नही। वेदो को पेड़ कहा गया है लेकिन भागवत को फल कहा गया है। अतः यह वेद से पृथक नही है वरन उससे ऊचा है।

"ब्रह्मा शब्देन परमात्मा उच्यते न तु वेदाः"

वेद जिस ब्रह्म का ज्ञान कराते है, वह ब्रह्म स्वयं यह भागवत है। एक बात बहुत ही स्पष्ठ तौर पर हमको समझनी होगी कि भागवत कोई ग्रन्थ, अथवा पुस्तक नही है अथवा मै जो इस पुस्तक में लिख रहा हूं, यह भागवत नही है। भागवत साक्षात ज्ञान स्वरूप परमात्मा है, यह अपना ही स्वरूप है।

भगवान वेदव्यास जी ने सारे वेदो का संपादन किया, ब्रह्मसूत्र लिखे पुराणो की रचना की महाभारत लिखा, लेकिन जब तक उन्होने भागवत की रचना नही की, तब तक उनको आनन्द की प्राप्ती नही हुई। कृत-कृत्यता का अनुभव नही आया।

यह सुनकर नारद जी कहते है- "ज्ञानयज्ञ करिष्यमि" मै यह ज्ञान यज्ञ करूंगा आप मुझे इसकी विधि बताईये। सनत्कुमारो ने कहा कि आप भागवत सप्ताह ऐसे स्थान पर करो, जहां प्राणियो का आपस में बैर ना हो- जैसे गंगा जी का किनारा।

अब जैसे ही गंगा जी के किनारे पर भागवत कथा करने का निश्चय किया तो उसका परिणाम यह हुआ कि कथा सुनने के लिए सारी नदियां वहां आ गई, सारे ऋषि, वेद पुराण तथा उनके अधिष्ठाता देवता वहां आ गये, नारद जी के आग्रह

पर सनत्कुमार कथा कहने लगे। सबसे पहले सनत्कुमार जी ने भागवत महात्मय बताना प्रारम्भ किया। कहते है जिन्होने मनुष्य जन्म लेकर एक बार भी भागवत कथा नही सुना, उन्होने केवल अपनी मां को प्रसव कष्ट दिया है, उसका जीवन गधे-घोड़े से भी निकृष्ट है। ऐसे लोग पशु के समान है। इन सब बातो का अर्थ यह है कि हम लोग मनुष्य जन्म की दुर्लभता को समझे और उसको श्रेष्ठ बनाए। शौनक जी सूत जी से पूछते है कि-

"निःश्रेमसे भागवतं पुराणं जातं। कुतो योगविदादिसूचकम।।"

आप भागवत की इतनी प्रशन्सा कर रहे है। इसमें इतनी शक्ति कहा से आयी?सूत जी बोले- भगवान श्रीकृष्ण जब अपना अवतार काल समाप्त करके पृथ्वी लोक से जा रहे थे तब उद्वव जी उनके पास जाकर कहने लगे कि हे भगवन आप यहा से चले जायेगे, यहा पर कलियुग का प्रवेश हो जायेगा और लोग दुखी हो जाएगे, तो उनके उद्वार के लिए कोई शक्तिशाली साधन भी तो होना चाहिए"- तब भगवान भी सोचने लगे और बोले मै स्वंय भागवत में प्रविष्ट हो जाता हूं। तब भगवान अन्तर्धान होकर भागवत में प्रविष्ठ हो गये। इसलिए भागवत को भगवान की शब्दमयी मूर्ती कहा जाता है। इसलिए इसमें इतनी शक्ति है।

जब सनत्कुमार जी कथा सुना रहे थे वहां पर भक्ति माता अपने दोनो पुत्रो (ज्ञान एवं वैराग्य) को लेकर पहुची। भागवत सुनते ही वो दोनो तरूण बनने लगे। भक्ति माता बहुत प्रसन्न हुई और वे सभी के हृदय में चली गयी। जब भगवान श्रीकृष्ण ने देखा कि उस सभा में सब के हृदय में भक्ति छा गयी है तो वे स्वयं सबके हृदय में प्रकट हो गये और सबको अपने देह की विस्मृति चली गयी अर्थात् उनका देहात्मभाव छूट गया, तो कुल मिलाकर मनुष्य के जीवन का प्रयोजन यही हुआ कि येन-केन-प्रकारेण उसका देहात्म भाव छूट जाय और यह केवल तभी सम्भव है जब हमारे हृदय में परमात्मा प्रकट हो जाय। लेकिन हमारे हृदय में परमात्मा का प्राकट्य तब तक नही हो सकता, जब तक वहां राग, द्वेष, कामना, घृणा, छल, मद, मात्सर्य आदि चीजे बैठी है। पहले हमे इन्हे हटाकर अपने आध्यात्मिक हृदय का निर्माण करना होगा। भक्ति, ज्ञान, वैराग्य से हृदय को सुशोभित करना होगा, तभी परमात्मा का प्राकृट्य हमारे हृदय में हो सकता है।

5. भागवत कथा श्रवण की महिमा

नारद जी सनत्कुमार जी से पूछते है कि हे भगवन! भागवत कथा के श्रवण से कौन-कौन लोग पवित्र हो जाते है? आप कृपा करके भागवत कथा श्रवण की महिमा बताईये। देखो पाप तो अनेक प्रकार के होते है। जैसे झूठ बोलना, किसी की निन्दा करना, चोरी करना आदि परन्तु ये सभी पाप जीव सृष्ठि मे है अर्थात ये पाप तभी तक है जब तक हमने अपने को देह के साथ जोड़ा हुआ है लेकिन ईश्वर सृष्ठि में

पाप का तात्पर्य है देह आत्मभाव के साथ जीवन को जीना। सनत-सुजातिया नामक ग्रन्थ मे सनत्कुमार जी धृत्रराष्ट्र को उपदेश करते हुए कहते है। कि -

अन्यथा संतमात्मानम अन्यथा प्रतिपद्यते।
किम तेन ना कृत वादं चोरेनाआत्म अपहरिना।।

हम है कुछ और तथा हमने अपने आप को कुछ और ही मान लिया है। यहि सबसे बड़ा पाप है। हम है तो सतचितानन्द स्वरूप तथा हमने अपने आप को 5-6 फुट का देह मान लिया है। इस देह को ना हमने पैदा किया और ना यह हमारी बात मानता है। इस देह को ही अपना स्वरूप मानकर जीना यह चोरी नही, सरासर डकैती है। इसलिए हम अपने स्वरूप को जान जाये यहि सबसे बड़ा पुण्य है और देहआत्म भाव ही सबसे बड़ा पाप है।

यहा पर सनत्कुमार जी कहते है कि जो मनुष्य पापियों का शिरोमणि हो अर्थात देह में अत्यन्त आसक्त हो, वो भी भागवत के चिंतन-मनन से पवित्र हो जाता है अर्थात अपना देहात्मभाव से मुक्त हो जाता है। फिर सनत्कुमार जी एक दृष्टांत के माध्यम से इसको समझाते है।

6. आत्मदेव तथा धुंधली की कथा

कहते है तुंगभद्रा तट पर आत्मदेव नाम का एक ब्राह्मण रहता था। उस ब्राह्मण की पत्नी की पत्नी का नाम धुंधली था। आत्मदेव बड़ा शास्त्रज्ञ था, वह वैदिक कर्मो में विश्वास रखने वाला था लेकिन आत्मज्ञानी नही था। उसकी पत्नी बहुत ही अडियल थी, गप-शप में उसको बहुत मजा आता था। वह क्रूर भी थी, घर के कामो में कुशल थी लेकिन झगड़ा कराने और करने में उसे बहुत आनन्द आता था।

इन पति-पत्नी के कोई पुत्र नही था। इसका धुंधली को तो कोई दुख नही था परन्तु आत्मदेव इस कारण बहुत दुखी रहता था। इसी कारण आत्मदेव एक दिन घर छोड़कर वन मे चला गया तथा थक-हार के एक तालाब के किनारे बैठ गया, तब वहां पर एक बड़े ही ज्ञानी सन्यासी वहां आये। आत्मदेव ने उन्हे नमस्कार किया और उनके चरणो में गिर पड़े। सन्यासी बोला 'क्या हुआ'? तुम्हे क्या दुख है? आत्मदेव ने सन्यासी जी को पूरी बात बताई और कहा कि महाराज बिना पुत्र के जीवन व्यर्थ है इसलिए मै जीना नही चाहता। सन्यासी महाराज हसे! और बोले तू पुत्र के पीछे क्यो पड़ा है, आखिर पुत्र से तुमको ऐसा कौन सा सुख मिलने वाला है। यह तो भगवान की तुझपे कृपा है कि तेरा पुत्र नही है। तू इस जीवन को प्रभु की प्राप्ति में लगा दे, अपने स्वरूप को जानने का प्रयत्न कर उसी मे परमआनन्द है। मनुष्य पहले पुत्र नही है, उसके कारण दुखी होता है। और जब पुत्र हो जाता है, वह पुत्र के कारण दुखी होता है। कहते है, जब तक मन मे कामना है, जीवन मे दुख बना रहता है। इस पर आत्मदेव कहता है-गृहस्थ आश्रम बड़ा ही अच्छा है।

नन्हे-मुन्न बच्चे होंगे, फिर जब वो बड़े होगे तो उनके भी बच्चे होंगे, कितना सुख है। अकेले जीने में भी कोई रस है आप मुझे किसी भी प्रकार से पुत्र की प्राप्ति करा दिजिए, नही तो मै जीवित रहकर क्या करूंगा?

सन्यासी महाराज बोले- ठीक है, उसे एक फल दिया और बोले- यह फल तुम अपनी पत्नी को खिला देना तथा एक साल तक सत्य व दया का पालन करना, एक वर्ष पश्चात् तुम्हारी पत्नी को एक पुत्र की प्राप्ति होगी वह पुत्र बड़ा ज्ञानी होगा।

आत्मदेव बड़े खुश हुए, घर आकर पत्नी को फल दिया और उसे सारी बात बताई तब पत्नी को बड़ा दुख हुआ वह सोचने लगी कि यदि मैने फल खा लिया तो मेरा शरीर खराब हो जायेगा। गर्भधारण के दुख मै कैसे सहन कर सकूंगी? सत्य-दया-तप यह सब कठिन नियम है ये सब मै कैसे कर सकूंगी? यह सोचकर उसने फल नही खाया। आत्मदेव ने जब पत्नी से पूछा कि फल खा लिया? तो उसने कहा कि हां मैने फल खा लिया है। धुंधली की एक बहन थी। वह एक दिन धुंधली के घर आयी, धुंधली ने उसे सारी बात बताई, तब उसकी बहन बोली कि मुझे भी बच्चा होने वाला है। तुम ऐसा नाटक करो कि तुमको गर्भ है। जब मेरे बच्चे का जन्म होगा तो वह बच्चा मै तुम्हे दे दूंगी, बदले में तुम मेरे पति को पैसे दे देना। यह फल तुम अपनी गाय को खिला दो। धुंधली ने ऐसा ही किया।

कुछ दिनो बाद धुंधली की बहन को पुत्र हुआ तो वह बच्चे को धुंधली को दे गयी और बदले में धुंधली न उसे पैसे दे दिये। सन्यासी के द्‌वारा दिये गये फल को खाकर गाय भी गर्भवती हो गयी तथा गाय ने भी एक सुन्दर कुमार को जन्म दिया उस गाय के बच्चे के कान, गाय के जैसे थे इसलिए उसका नाम गोकर्ण रखा गया। सोचा गया कि धुंधली के बच्चे का नाम क्या हो तो वह स्वयं बोली- मेरा नाम धुंधली है तो इसका नाम धुंधकारी होना चाहिए। इसलिए उसका नाम धुंधकारी रखा गया।

बड़ा होकर गोकर्ण जी तो विरक्त ज्ञानी, पण्डित बन गये परन्तु धुंधकारी महादुष्ट, क्रूर और भयकारी बन गया। धुंधकारी केवल भोग करता रहता था, फिर उसने अपने माता-पिता को गाली देना तथा पीटना भी शुरू कर दिया तथा वैश्याओं के फंदे में फसकर अपने पिता की सारी सम्पत्ति नष्ट कर दी। अब आत्मदेव रोने लगे और सन्यासी की कहि बाते याद करने लगे फिर सोचने लगे कि यहां तो दुख ही दुख है तथापि वे भगवान को धन्यवाद देने लगे। बोले, इस बच्चे के कारण मुझे संसार से वैराग्य हो गया। संसार में कोई सार नही है, यह बात मेरी समझ में बहुत देर में आयी है। तब गोकर्ण बोले कि पिता जी आप संसार की झूठी आशाएं छोड़कर अपना जीवन प्रभु चरणों मे समर्पित कर दीजिए। वही सच्चा सुख है। तब गोकर्ण जी ने आत्मदेव जी को देहात्म भाव को त्यागने के लिए उपदेश दिया। गोकर्ण की बात मानकर आत्मदेव वन में चले गये तथा वहां पर श्रीमदभागवत के दशम स्कन्ध का पाठ करने लगे जिसके कारण उनकी मुक्ति हो गयी। धुंधली

ने धुंधकारी से तंग आकर एक दिन कुए मे कूदकर आत्महत्या कर ली। धुंधकारी अब चोरी करने लगा जिसके कारण कुछ वैश्याओं ने उसका चोरी का धन लेने के इरादे से उसको गला दबाकर मार डाला। इस बीच गोकर्ण जी यात्रा करने के लिए चले गये थे। जब उनको अपने भाई की मृत्यु का समाचार मिला तो उन्होने पवित्र क्षेत्रों में धुंधकारी का श्राद्धकर्म किया और अपने गांव में आ गये। रात को गोकर्ण जी आंगन में सो रहे थे तब वहां एक बड़ा भयंकर प्राणी जो कभी बकरे की शक्ल वाला, कभी भैस की शक्ल वाला तो कभी गन्र्धव की शक्ल का हो जाता था वह वहा आया, गोकर्ण जी ज्ञानी थे वे घबराये नही उन्होने उस प्रेत के ऊपर जल छिड़का और पूछा कि आप कौन है। तब वह प्रेत बोला- मै तुम्हारा भाई धुंधकारी हूँ। अपने घोर कर्मो के कारण मुझे प्रेत योनि प्राप्त हो गयी है। गोकर्ण जी कहते है- परन्तु मैने तो तेरी मुक्ति के लिए बहुत से श्राद्ध किये है। धुंधकारी कहता है- मैने इतने पाप किये है कि ऐसे हजार श्राद्ध करोगे तो भी मेरी मुक्ति नही होगी। गोकर्ण जी बोले ठीक है अभी तुम आराम करो कल मै कुछ करता हूं। प्रातः उठकर गोकर्ण जी ने सूर्य भगवान का आहवाहन किया। सूर्य भगवान प्रसन्न होकर कहते है कि तुम भागवत सप्ताह करो सब ठीक हो जायेगा। फिर तत्काल भागवत सप्ताह का आयोजन किया गया। गांव के सभी लोग आंगन में बैठ गये गोकर्ण जी ने भागवत कथा कही, वहा पर एक बास रखा था जिसमे सात गांठे थी। प्रेतआत्मा धुंधकारी को कोई और जगह नही मिली तो वह बांस में जाकर बैठ गया। एक दिन की कथा हुई तो बांस की एक गांठ फठ गयी। दूसरे दिन की कथा हुई तो दूसरी गांठ फट गयी। लोगो की समझ नही आ रहा था कि यह कुछ फटने की आवाज कहा से आती है। सातवे दिन कथा समाप्ति पर बाँस की आखिरी गांठ भी फट गयी और उस बास में से एक दिव्य जीव निकला और वह गोकर्ण को प्रणाम करके बार-बार धन्यवाद देता है कि भाई आपने मुझे दुर्गती से बचा लिया। देखते ही देखते उसके लिए बैकुण्ठ से विमान आया। तब गोकर्ण ने हरिदासो से कहा- यहां हमारे इतने सारे श्रोता है सबने भागवत सुना है। तुम केवल धुंधकारी के लिए विमान लेकर आये है? यह क्या बात हुई? श्रवण तो सबने किया फिर फलभेद कैसे हुआ? इस पर हरिदासो ने कहा कि हे गोकर्ण जी कथा श्रवण तो सबने किया लेकिन उस पर मनन और निधिध्यासन केवल धुंधकारी ने ही किया है। सभी लोगो के कान केवल कथा सुन रहे थे लेकिन मन संसार के विषय वस्तुओ तथा सम्बन्धो मे ही लगा था। कथा का तात्पर्य निर्णय अर्थात् मनन तथा केवल परमात्मा का ही हमेशा चिन्तन (निधिघ्यासन) केवल धुंधकारी ने ही किया क्या कि इसका देह आत्म भाव तो पहले ही खत्म हो चुका है तथा इसके जगत के सम्बंध-संग्रह का भी त्याग कर दिया है। धुंधकारी जिस प्रकार छटपटा रहा था कि इस गति से कैसे निकलू, वैसी व्याकुलता दूसरो में नही थी।

देखो इस दृष्टान्त का बहुत ही गूढ़ रहस्य है। एक बार यह कहानी मैने किसी को बतायी तो एक डॉ साब भी वहां पर बैठा थे। उन्होंने मुझसे पूछा कि सर - हमारे देश में प्रतिदिन हजारो जगह भागवत कथा होती है हमने तो कोई विमान उतरते हुए नही देखा और ना ही कही गाठे खुलती देखी है, इसका मतलब यह कहानी झूठी है। मैने उन डॉ साब से बिना किसी वाद-विवाद के कह दिया कि हां झूठी है और यह कहानी आपके लिए नही है। देखो दोस्तों- भागवत अथवा अन्य किसी पुराण में जो कहानी या रूपक बताया जाता है हम संसारिक स्थुल बुद्धि से उसका तात्पर्य निर्णय नही कर सकते है और जब तक सही तात्पर्य हमे पता नही चलेगा तब तक ये दृष्टान्त हमें केवल काल्पनिक कहानियां ही लगेगी।

अभी हमारी बुद्धि बहिरगामी है, यह तर्क करना जानती है। इसको स्थुल बुद्धि कहते है यहि बुद्धि जब अन्तर्गामी हो जाती है तथा कारण तथा कार्य से परे चली जाती है इसको शूक्ष्म बुद्धि कहते है। जब हम शूक्ष्म बुद्धि से चिन्तन करते है तो हि हम इन कहानियों का तात्पर्य निर्णय कर सकते है। इस कहानी का तात्पर्य यह है कि जब तक हम देहात्मभाव छोड़कर परमात्मा के स्वरूप को अपने में प्रकट नही होने देते। तब तक आदमी में मान, अपमान, राग-द्वेष बना रहता है और जब तक हममे मान बना है तब तक भगवान का विमान नही आ सकता। वि-नही, मान-अभिमान। जब अभिमान नही है तो माया की गति आपको कुण्ठित नही करेगी अर्थात आप बैकुण्ठ मे ही है। वै-माया, कुण्ठ-कुण्ठित, जहां माया की गति कुण्ठित हो जाती है। उस अवस्था को वैकुण्ठ कहते है।

7. सनदकुमारो द्वारा भागवत सप्ताह व उसकी विधि

इसके बाद सनत्कुमारो ने भागवत कथा की श्रवण विधि बताते हुए कहते है कि वक्ता को बड़े श्रद्धा से कथा कहनी चाहिए। कथा के दौरान अधिक भोजन नही करना चाहिए। वक्ता व्यास से अपनी संकाओ का निवारण करना चाहिए। नियमपूर्वक भली भाति कथा कहने तथा सुनने से अत्यन्त आनन्द प्राप्त होता है। इस प्रकार भागवत कथा की विधि बताने के पश्चात पूरी भागवत कथा वहां पर कही गयी। कथा समाप्ति पर शुकदेव जी साक्षात वहां पधारे। शुकदेव जी कहते है- यह अमृत है। तोते का चखा हुआ फल, एक दम मीठा होता है। ‘‘शुक” का अर्थ तोता भी होता है।

अब शौनक जी सूत जी से प्रश्न पूछते है कि भागवत कथा पहले कब हुई थी? सूत जी कहते है, जब भगवान श्री कृष्ण पृथ्वी लोक से चले गये, उसके तीस साल सबसे पहले शुकदेव जी ने यह भागवत कथा परीक्षित जी को सुनाई थी। उसके दौ सौ साल बाद यह कथा गोकर्ण ने दूसरे सब लोगो को सुनाई। इसके पश्चात तीस साल और बीत जाने के बाद सनत्कुमारो ने नारद जी के निमित्त से यह कथा सबको सुनाई। भागवत, भगवान की कथा नही है। भागवत का अर्थ होता है भगवान

का भक्त। अतः भागवत में जो भी कथाये है वे भगवान के भक्तों की कथाये है। भगवान और भगवान के भक्त अलग नही है। भगवान जिनके माध्यम से प्रकट होते है। उन्हे भागवत कहा जाता है तथा भागवत के इस संसार में अभिव्यक्ति को भक्ति कहते है।

कहते है, पहले कबीरदास जी हरि-हरि कहते भगवान के पीछे जाते थे लेकिन बाद मे भगवान कबीर के पीछे कबीर-कबीर कहते उनके पीछे आते थे -

कबीर मन निर्मल भया जैसे गंगा नीर।
पीछे-पीछे हरि फिरे कहत कबीर-कबीर।।

भागवत, भगवान का स्वरूप है और जो अपने भगवत स्वरूप को जान लेता है उसी को भागवत कहा जाता है। फिर भागवत और भगवत में कुछ अन्तर नही रह जाता। इसी के साथ भागवत महात्मय का प्रसंग समाप्त होता है।

—ॐ—ॐ--ॐ—